ट्रस्ट व प्रबंधकारिणीके सदस्य.

श्री आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला.

संरक्षक (Patron).

श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला पुष्प नं० १



श्रीमत्परमपूज्य विद्वच्छिरोमणि प्रातःस्मरणीय दिगंबर
जैनाचार्यश्रीकुन्थुसागरजीमहाराजविरचित

लघुबोधामृतसार

[संस्कृत, अंग्रेजी व हिंदी टीकासहित]

प्रकाशक—
धर्मनिष्ठ समाजभूषण
सेठ मोतीचंदजी सरिया, बांसवाडा.

द्वितीयावृत्ति ५००० | वीर संवत् २४७१ सन् १९४४ | बोधामृतपान.

श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रन्थमाला.

उद्देश—परमपूज्य आचार्यश्रीके द्वारा रचित ग्रंथोंका प्रकाशन व प्रचार करना व अनुकूलताके अनुसार इतर प्राचीन जैनग्रंथोंका उद्धार तथा प्रकाशन करना है।

सामान्य नियम.

१ इस ग्रंथमालाको जो सज्जन अधिकसे अधिक सहायता देना चाहेंगे वह सहर्ष स्वीकृत की जायगी।

२ जो सज्जन १०१) या अधिक देकर इस ग्रंथमालाका स्थायी सभासद बनेंगे उनको ग्रंथमालासे प्रकाशित सर्वग्रंथ पोस्टेज खर्च लेकर विनामूल्य दिये जायेंगे।

३ जो सज्जन ५१) या अधिक देकर हितचिंतक बनेंगे उनको पोस्टेज व अर्धमूल्य लेकर प्रकाशित ग्रंथ दिये जायेंगे।

४ जो सज्जन २५) या अधिक देकर सहायक बनेंगे उनको पोस्टेज व लागतमूल्य लेकर प्रकाशित ग्रंथ दिये जायेंगे।

५ अन्य सज्जनोंको निश्चितमूल्यसे दिये जायेंगे।

६ ग्रंथोंके मूल्यसे आई हुई रकमका उपयोग ग्रंथमालाके द्वारा प्रकाशित होनेवाले ग्रंथोंके उद्धार में ही होगा।

७ ग्रंथमालाके ट्रस्टडीड होकर मुंबईमें वह रजिस्टर्ड होचुका है।

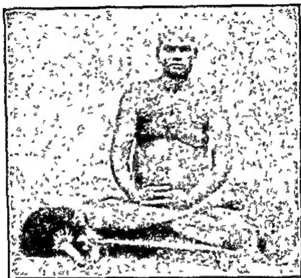
सहायता भेजनेका पता—सेठ गोविंदजी रावजी दोशी

ठि. रावजी सखाराम दोशी, कोषाध्यक्ष, सोलापुर.

ग्रंथमालासंबंधी सर्व प्रकारका पत्रव्यवहार नीचे लिखे पतेपर करें

वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री

मंत्री—आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला, सोलापुर.



श्रीपरमपूज्य, पूज्यपाद, प्रातःस्मरणीय, जगद्वंद्य, जगदुद्धारक,
नरेंद्रपूज्य, व्याख्यानवाचस्पति, कविवर्य,
वादीभकेसरी, विद्वच्छिरोमणि,
आचार्यवर्य १०८ श्रीकुन्थुसागरजी महाराज.

" भूमिका "

इस परिवर्तनशील संसारमें प्रतिदिन निरंतर प्रत्येक मानवके लिए " आया कहांसे, जाना कहां और करना क्या " इन तीन बातोंपर विचार करनेकी परम आवश्यकता है। दो सौ वर्षोंसे वर्ष पहिलेका कोई भी मनुष्य आजकल दृष्टिगोचर नहीं होता है। इससे यह निष्कर्ष निकला कि सब मानव कये आकर इस संसाररूपी सरायमें बसे हैं। जब किसी अन्य स्थानसे आना सिद्ध हुआ तो जाना भी एक दिन अवश्य होगा। आया जरूर जाना भी जरूर और करना भी जरूर है। सत्कार्य करो या दुष्कार्य करो। जानेके लिए पांच ही स्थान हैं याने गति हैं। नरकगति, पशुगति, मनुष्यगति, देवगति और पांचवी अंतिम मोक्षगति है। इनके सिवाय और छटी कोई गति नहीं है। आधुनिक कालमें मनुष्य सौ सवासौ बरससे अधिक नहीं रह सकता है। सदाके लिए न कोई रहा और न रहेगा। सब संपत्ति, राज्य, वैभव, इष्टमित्रादिक और कुटुंबवर्गका समागम विद्युत्‌-वेगके समान या जलके बुदबुदा समान क्षणभंगुर जानो। करनीका फल अवश्य भोगना ही पडेगा। भोगे बिना कभी छुटकारा नहीं होगा। इसलिए प्रत्येक मानवको कर्तव्यपरायण बनकर, इस भूतलके ऊपर ऐसे ऐसे अलौकिक कार्य करना चाहिए जिससे कोई भी मनुष्य भूखा न मरे। अन्नहीनको अन्न देना, वस्त्रहीनको वस्त्र देना, स्थान भ्रष्टको स्थान देना। किसीकी निंदा, बुराई, तिरस्कार, अपमान आदि न करना यही सर्वधर्मोंका सार है। इसके बिना जीवन भी मरणतुल्य है। मानवजीवनकी शोभा इस भूतलपर देश विदेश काले गोरे आदिके भेदको सर्वथा छोडकर प्राणिमात्रके हित

चिंतन करनेसे, उनके साथ प्रेम बढ़ानेसे ही होगी। केवल अपने कुटंबका पालन करना मनुष्यता नहीं होगी। यह तो पशुवृत्तिका परिचय देना है। क्यों कि पशु भी अपने कुटंबका पालन करते हैं। इसमें कोई विशेषता नहीं। सत्कार्योंके द्वारा ही मनुष्य अपने जीवनको उन्नत और विकासमय बना सकता है।

जीवोंकी हिंसा करनेसे नरक आयुका बंध होता है, कुटिल और अशुभ परिणामोंसे पशु पर्याय का बंध होता है। और शुभाशुभ मिश्रित भावोंसे मनुष्य आयुका बंध होता है। और परोपकार परिणतिरूप शुभभावोंसे देव आयुका बंध होता है। इस प्रकार आत्मज्ञानरहित संसारी जीव आयु कर्मका बंध करते हैं। संसारमें परिभ्रमण कराने वाले और अतिशय दुःखको देनेवाले आयु कर्मका बंध प्रायः मोहसे होता है। इसप्रकार ऊपर कहे हुए भावोंसे रहित जीव है, वह किसी समय भी कर्मोंका बंध नहीं करता है।

इस ग्रंथमें आचार्यश्रीने वास्तविकतासे विश्वप्रेम और विश्व-कल्याणकी भावना प्रदर्शित कर संसारको सच्ची शांति और सच्चा सुख प्राप्त करनेका मार्ग बतलाया है। यह ग्रंथ कोई जाति, कौम व समाज विशेषको लक्ष्य करके नहीं लिखा गया है, किंतु मानवमात्रके हितके लिए "लघुबोधामृतसार" नामक अनुपम ग्रंथकी रचना की। संसारमें ऐसे सद्गुरु और महात्माओंका जीवन केवल जगत्‌कल्याणके लिए ही होता है। अतः ऐसे निस्वार्थ परोपकारी, विश्वोद्धारक महात्माका संपूर्ण प्राणियोंको कृतज्ञ होना चाहिए। इसीमें मानव जीवनकी सफलता है।

गुरुचरणसरोजचंचरीक—

सज्जनलाल जैन पोस्टल आफीसियल रतलाम.

ग्रंथकर्ताका परिचय

महर्षि प्रातःस्मरणीय आचार्य श्रीकुंथुसागरजी महाराजने इस ग्रंथकी रचना की है। आप एक परम प्रभावक वीतरागी, विद्वान् आचार्य हैं। आपकी जन्मभूमि कर्णाटक प्रान्त है जिसे पूर्वमें कितने ही महर्षियोंने अलंकृत कर जैनधर्मका मुख उज्वल किया था। इसलिए "कर्णेषु अटतीति" सार्थक नामको पाकर सबके कानोंमें गूंज रहा है।

कर्णाटक प्रांतके ऐश्वर्ययुत बेळगांव जिल्हेमें ऐनापुर नामक सुंदर नगर है। वहांपर चतुर्थकुलमें अलंकारभूत अत्यंत शांत स्वभाववाले सातप्पा नामक श्रावकोत्तम रहते थे। आपकी धर्मपत्नी साक्षात् सरस्वतीके समान सद्गुणसंपन्न थी। इसलिए सरस्वतीके नामसे ही प्रसिद्ध थी। सातप्पा व सरस्वती दोनों अत्यंत प्रेम व उत्साहसे देवपूजा व गुरूपास्ति आदि सत्कार्यमें सदा मग्न रहते थे। धर्मकार्यको वे प्रधानकार्य समझते थे। उनके हृदय में आंतरिक धार्मिक श्रद्धा थी। श्रीमती सौ. सरस्वतीने संवत् १९५० में एक पुत्ररत्नको जन्म दिया। इस पुत्रका जन्म कार्तिक शुक्लपक्षकी द्वितीयाको हुआ। मातापिताओंने पुत्रका जीवन सुसंस्कृत हो इस सुविचारसे जन्मसे ही आगमोक्त संस्कारोंसे संस्कृत किया। जातकर्म संस्कार होनेके बाद शुभमुहूर्तमें नामकरण संस्कार किया जिसमें इस पुत्रका नाम रामचंद्र रक्खा गया। बादमें चौलकर्म, अक्षराभ्यास, पुस्तकग्रहण आदि आदि संस्कारोंसे संस्कृत कर सद्विद्याका अध्ययन कराया। रामचंद्रके हृदयमें बालकालसे ही विनय, शील व सदाचार आदि भाव

जागृत हुए थे। जिसे देखकर लोग आश्चर्ययुक्त व संतुष्ट होते थे। रामचंद्रको बाल्यावस्थामें ही साधु संयमियोंके दर्शनमें उत्कट इच्छा रहती थी। कोई साधु ऐनापुरमें आते तो यह बालक दौड़कर उनकी वंदनाके लिए पहुंचाता था। बाल्यकालसे ही इसके हृदयमें धर्मके प्रति अभिरुचि थी। सदा अपने सहधर्मियोंके साथ तत्त्वचर्चा करनेमें ही समय बिताता था। इस प्रकार सोलह वर्ष व्यतीत हुए। अब माता पितापिताओंने रामचंद्रको विवाह करने का विचार प्रगट किया। नैसर्गिक गुणसे प्रेरित होकर रामचंद्रने विवाहके लिए निषेध किया एवं प्रार्थना की कि पिताजी! इस लौकिक विवाहसे मुझे संतोष नहीं होगा। मैं अलौकिक विवाह अर्थात् मुक्तिलक्ष्मीके साथ विवाह कर लेना चाहता हूं। मातापिताओंने पुनश्च आग्रह किया। मातापिताओंकी आज्ञोल्लंघनभयसे इच्छा न होते हुए भी रामचंद्रने विवाहकी स्वीकृति दी। मातापिताओंने विवाह किया। रामचंद्रको अनुभव होता था कि मैं विवाह कर बड़े बंधनमें पड़ गया हूं।

विशेष विषय यह है कि बाल्यकालसे संस्कारोंसे सुदृढ होने के कारण यौवनावस्थामें भी रामचंद्रको कोई व्यसन नहीं था। व्यसन था तो केवल धर्मचर्चा, सत्संगति व शास्त्रस्वाध्यायका था। बाकी व्यसन तो उससे घबराकर दूर भागते थे। इस प्रकार पच्चीस वर्ष पर्यंत रामचंद्रने किसी तरह घरमें वास किया। परंतु बीचबीचमें यह भावना जागृत होती थी कि भगवन्! मैं इस गृहबंधनसे कब छूटूं? जिनदीक्षा लेनेका भाग्य कब मिलेगा? वह दिन कब मिलेगा जब कि सर्वसंगपरित्यागकर मैं स्वपरकल्याण कर सकूं?

दैववशात् इस बीचमें मातापिताओंका स्वर्गवास हुआ। विकराल कालकी कृपासे भाई और बहिनने भी विदा ली। तब रामचंद्रजीका चित्त और भी उदास हुआ। उनका बंधन छूट गया। तब संसारकी अस्थिरताका उन्होंने स्वानुभवसे पक्का निश्चय करके और भी धर्ममार्गपर स्थिर हुए।

रामचंद्रके श्वसुर भी धनिक थे। उनके पास बहुत संपत्ति थी। परन्तु उनको कोई संतान नहीं था। वे रामचंद्रसे कई दफे कहते थे कि यह संपत्ति (घर वगैरह) तुम ही ले लो, मेरे यहां के सब कारोबार तुम ही चलाओ। और रामचंद्र अपने श्वसुरको दुःख न हो इस विचारसे कुछ दिन रहा भी। परंतु मनमनमें यह विचार किया करता था कि " मैं अपना भी घरदार छोडना चाहता हूं। इनकी संपत्तिको लेकर मैं क्या करूं "। रामचंद्रकी इस प्रकारकी वृत्तिसे श्वसुरको दुःख होता था। परन्तु रामचंद्र लाचार था। जब उसने सर्वथा गृहत्याग करनेका निश्चय ही कर लिया तो उनके श्वसुरको बहुत अधिक दुःख हुआ।

आपने श्रीपरमपूज्य आचार्य श्री शांतिसागर महाराजके पाद मूलको पाकर अपने संकल्पको पूर्ण किया। सन् २५ में श्रवणबेलगोलाके मस्तकाभिषेकके समय पर आपने क्षुल्लक दीक्षा ली व सोनागिर क्षेत्रपर मुनिदीक्षा ली। और मुनि कुंथुसागरके नामसे प्रसिद्ध हुए। जब आप घर छोड करके साधु हुए तब आपकी धर्मपत्नी धर्मध्यान करती हुई घरमें ही रहीं।

आपने अपनी क्षुल्लक व ऐलक अवस्थामें बहुतही धर्मप्रभावनाके कार्य किये हैं। संस्कारोंके प्रभावसे, क्रिये सतत उद्योग

किया है । आपने मुनि अवस्थामें उत्तरप्रांतके अनेक स्थानोंमें विहार कर धर्मकी जागृति की है । गुजरात व बागड प्रांत जो कि चारित्र व संयमकी दृष्टिसे बहुत ही पीछे पडा था, उस प्रांतमें छोटेसे छोटे गांवमें भी विहार कर लोगोंको धर्ममें स्थिर किया है ।

आपमें स्वपरकल्याणकारी निर्मल ज्ञान होनेके कारण आप सर्वजनपूज्य हुए हैं । आपकी जिस प्रकार ग्रंथरचना कलामें विशेष गति है, उसी प्रकार वक्तृत्वकलामें भी आपकी ख्याति है । श्रोताओंके हृदयको आकर्षण करनेका प्रकार, वस्तुस्थितिकी निरूपण कर भव्योंको संसारसे तिरस्कार विचार उत्पन्न करानेका प्रकार आपको अच्छी तरह अवगत है। आपके गुण, संयम आदियोंको देखनेपर यह कहे हुए बिना नहीं रह सकते कि आचार्य शांतिसागरजी महाराजने आपका नाम कुंथुसागर बहुत सोच समझकर रक्खा है ।

आपने अपनी माता सरस्वतीका नाम सार्थक बनाया है। क्योंकि आप अपने नाम तथा काममें सरस्वतीपुत्र ही सिद्ध हुए हैं। चतुर्विंशतिजिनस्तुति, शांतिसागर चरित्र, बोधामृतसार, निजात्म-शुद्धिभावना, मोक्षमार्गप्रदीप, ज्ञानामृतसार, स्वरूपदर्शनसूर्य, नरे-शधर्मदर्पण मनुष्यकृत्यसार, शांतिसुधासिंधु आदि नीतिपूर्ण तत्वग-र्भित १० ग्रंथरत्नोंकी उत्पत्ति आपके ही अगाधज्ञानरूपी खानसे हुई है, हो रही है और होती रहेगी ।

आपके दुर्लभ संस्कृतभाषा–पांडित्यपर बडे २ विद्वान् पंडित भी मुग्ध हो जाते हैं । आपकी ग्रंथनिर्माणशैली अपूर्व है । वर्णन–कौशल्य निराला है । आगम विषयोंको आधुनिक ढंगसे

स्पष्टीकरण करनेमें आप सिद्धहस्त हैं। आपकी भाषण-प्रतिभा, शान्त व गंभीर मुद्राके सामने बड़े २ राजाओंके मस्तक झुकते हैं। गुजरात प्रांतके प्रायः सभी संस्थानाधिपति आपके आज्ञाधारी शिष्य बने हुए हैं। अबतक हजारोंकी संख्यामें जैनेतर आपके सदुपदेशसे प्रभावित होकर मद्यमांस (मद्य, मांस, मदिरा) के नियमी व धर्मी बन चुके हैं। गुजरात व बागड प्रांतमें आपके द्वारा जो धर्मप्रभावना हुई है व हो रही है वह इतिहासके पृष्ठोंपर सुवर्णाक्षरोंमें चिरकालतक अंकित रहेगी। गुजरातमें कई संस्थानिकोंने अपने राज्यमें इन तपोधनके जन्मदिनके स्मरणार्थ सार्वजनिक छुट्टी व सार्वत्रिक अहिंसादिन मनानेके फर्मान निकाले हैं। सुदासना स्टेटके प्रजावत्सल नरेश तो इतने भक्त बन गये हैं कि महाराजका जहां २ विहार होता है वहां प्रायः उनकी उपस्थिति रहती है। कभी अनिवार्य राज्यकार्यसे परवश होकर महाराजसे बिदा लेनेका प्रसंग आनेपर माताको बिछुड़ते हुए पुत्रके समान नरेशकी आंखोंमेंसे आंसु बहते हैं। धन्य है ऐसी गुरुभक्ति! युवराज कुमार साहेब रणजीतसिंहजी पूज्यवर्यके परमभक्त हैं। वे कई समय महाराजकी सेवामें उपस्थित होकर आत्महितके तत्वोंको पूछते हुए महाराजकी सेवामें ही दीर्घ समय व्यतीत करते हैं। तारंगाजीसे महाराजका विहार होनेका समाचार जानकर कुमार साहेबसे रहा नहीं गया, वे पूज्यश्रीके चरणोंमें उपस्थित होकर (अश्रुपात करते हुए) महाराजसे निवेदन करते हैं कि स्वामिन्! पुन कब दर्शन मिलेगा! कितनी अद्भुतभक्ति है यह! पूज्यश्रीने आज गुजरातमें जो धर्मजागृति की है वह "न भूतो न भविष्यति" है। गुजरातमें जैन क्या, जैनेतर

वर्ग; हिंदु वर्ग, मुसलमान वर्ग, उनके चरणोंके भक्त हैं। आज पूज्यश्रीका स्थान बहुत ऊंचा है। अलुवा, माणिकपुर, वेणपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा सांदु आदि अनेक राज्योंके अधिपति आपके सद्गुणोंसे मुग्ध हैं। पिछले दिन बडोदा राज्यमें आपका अपूर्व स्वागत हुआ। राज्यके न्यायमंदिरमें स्टेटके प्रधान सर कृष्णमाचारीकी उपस्थितिमें आचार्यश्रीका सार्वजनिक सत्योपदेश हुआ।

आप भगवान् समंतभद्र जिनसेनादिका स्मरण दिलाते हैं। जो लोकोपकारका कार्य महर्षि कुंदकुंद, प्रभाचंद्र अकलंक, नेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती आदिने किया था वह इस समय अपने आचार्य कुंथुसागरजी महाराज कर रहे रहे हैं। इस समय आपके द्वारा बागड प्रांतमें जो चेतना [redacted] है वह आशातीत है। इस पिछडे हुए प्रांतमें बीसों वर्षोंमें होनेलायक सुधार कुछ महिनोंमें होगया है। ऐसे महाविभूतियोंसे ही धर्मका मुख उज्वल होता है। ऐसे प्रातः स्मरणीय पूज्य महर्षिके चरणोंमें त्रिकाल अनन्त नमोस्तु है।

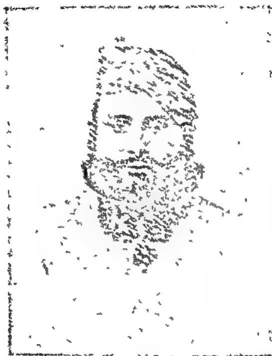
प्रकृत ग्रंथ लघुबोधामृतसार जो आपके समक्ष है, पूज्य आचार्यश्रीके द्वारा विरचित है।

ग्रन्थ-परिचय.

यह लघु-बोधामृतसार नामक १० श्लोकोंका छोटासा ग्रंथ-सांसारिक चतुर्गति और अंतिम निर्वाणगतिकी वास्तविकता तथा जीवका कर्तव्य जाननेके लिए महान् उपयोगी है। अतः संपूर्ण मनुष्य समाजके लिए अध्ययन और मनन करने योग्य है। इसका अनुभव कर यह जीव पंचमगति [मोक्ष] प्राप्त कर सकता है।

विनीत-गुरुचरण सेवक-वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
मंत्री-श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला.

[illegible]



धर्मनिष्ठ पुरुष

स्व. रावसाहब सेठ हिमतचंदजी बांसवारा.



श्रीमती धर्मचंद्रिका

जडावबाईजी बांसवाडा

द्वितीयआवृत्तिके प्रकाशक

धर्मरत्न, समाजभूषण, सेठ मोतीचंदजी सरियाका

संक्षिप्त परिचय।



सेठ मुकुंदजी धनराजजीके पवित्र वंशमें सेठ चंदालालजीके कुलदीपक पुत्र राय-साहिब विजयचंदजी गण्यमान व्यक्ति होगये हैं। आप बासवाडा स्टेट व बागड प्रांतके भूषण थे। वीरता धीरता और धार्मिकता आदिमें वे ख्यातिप्राप्त व्यक्ति थे। राज्यमें भी आप सम्मानित सेठ थे। भारत सरकारने आपको "राय-साहिब" की पदवी प्रदान की थी। आपने संवत् १९७६ में २५०००) का दान कर बोर्डिंग स्थापित की थी जो कि आपके जीवन कालमें अच्छा कार्य करती रही। आपने अपने जीवन कालमें इस चंचललक्ष्मीका कई प्रकारसे अपने हाथों लाखों रुपयोंका दान किया।

बांसवाड़ा राज्यमें होनेवाली दशहरेकी हिंसा [१०६ भैंसोंके वार्षिक वधको] हजारों रुपये खर्च करके आपने बंद करवा दी है। इसके अलावा आपने और १२ गांवोंमें भी कई जीवोंकी हिंसा सदाके लिए बंद करवाई है।

सारांश यह कि बडे बडे धार्मिक, सामाजिक और राजकीय कार्योंमें आपका पूरा सहयोग रहता था। ऐसे नरपुंगव सेठ विजयचंदजीके सुपुत्र सेठ मोतीचंदजी सरिया हैं।

आपका जन्म ज्येष्ठ शुक्ल ८ मी. संवत् १९६८ में हुआ है। १२ वर्षकी अवस्थामें ही आपको पितृप्रेमसे वंचित [illegible] जाना

पड़ा; उस समय आपके छोटे भाई महीपालजीकी अवस्था ९ वर्षकी थी।

आपकी सुयोग्य, नीति-परायण, धर्मचंद्रिका माता जड़ाव-बाईजीने आपके लालन, पालन व शिक्षणका सुप्रबंध रक्खा। तथा स्टेट व गृहस्थी की सम्हाल भी मुनीम आदिके सहयोगसे करने लगी। फिर भी छोटी अवस्थासे ही सेठ मोतीचंदजीको गृहस्थीका भार उठाना पड़ा।

जिस प्रकार वीरता, धीरता आदिका प्रतिबिंब आपपर आपके पिताका था, उसी प्रकार धार्मिकता, आदि कई गुणोंका प्रभाव आपपर माताका था।

आपकी मातुश्री धर्मचंद्रिका जड़ावबाईजी श्रावकके गुणोंसे परिपूर्ण पूजा, स्वाध्याय, सामायिक, धर्मचर्चा आदि धार्मिक कार्योंमें सदा तत्पर और सावधान रहती है। आपको धार्मिक ज्ञान भी अच्छा है। आप अपना शुद्ध भोजन अति सावधानी-पूर्वक अलग ही बनाती है और उदासीन वृत्तिसे रहती है।

ऐसी सुयोग्य माताका सेठ सा. पर भारी प्रभाव है और आप हैं भी माके बड़े ही आज्ञाकारी पुत्र।

गत वर्ष बांसवाड़ामें महाराज कुंथुसागरजीका जो चातुर्मास हुआ उसका प्रधान श्रेय सेठ साहिबको ही है। चातुर्मासमें संघकी जो वैयावृत्ति और व्याख्यान आदि करानेका जो सुप्रबंध आपने किया वह अति प्रशंसनीय है। आपने महाराजके उप-देशोंसे प्रभावित होकर समाज व धर्मसेवाके लिए अपनी शक्ति लगादी है।



श्री धर्मनिष्ठ गुरुभक्त
सेठ मोतीचंदजी सरिया, बांसवाड़ा.



श्री धर्मनिष्ठ गुरुभक्त

सेठ मदीलालजी सरिया, बांसवाड़ा.

दिगंबर जैन बोर्डिंग बांसवाड़ा
। पुनः अच्छे रूपमें चाल्र

क्षेत्रमें भी आपको प्रधान श्रेय है।
को भी आपने एकमुश्त ५००१)
। इस तरह संस्थाओंके संचालन
२००००) रु.का दान कर चुके हैं।
र बागर प्रान्तके उद्धारमें कर रहे
प प्रतिदिन कुछ न कुछ सोचा

गमें जो सेवक मंडल तैयार हुए हैं
ही कार्य है। आप एक जागृत
वाणका हसाह अपार है, जिस कार्य
छोड़ते हैं। आप इस प्रांतके चमकते
व्यक्ति उन्हें सहयोगी मिल जांय
ो सकता है।

भी बहुत ही सरल, सरक, सादा,
, गुणग्राहकता गुण भविष्यमें उन्हें
कर सकता है।

ाहिस तक ही हुई है, फिर भी
। इसीसे आप इस समय निम्न
दाल रहे हैं—



श्री धर्मनिष्ठ [illegible]हभक्त

सेठ मदीपालजी सरिया, बांसवाड़ा.

श्री सेठ चंपालाल विजयचंद दिगंबर जैन बोर्डिंग बासवाड़ा जो अव्यवस्थित ढंगपर चल रहा था पुनः अच्छे रूपमें चालू कर दिया है।

कन्याशालाको संचालित करनेमें भी आपको प्रधान श्रेय है।

कुंथुसागर स्कालर्शिप फंडको भी आपने एकमुश्त ५००१) रु. प्रदान कर चालू किया है। इस तरह संस्थाओंके संचालन आदिमें आप गत वर्ष लगभग २००००) रु.का दान कर चुके हैं. और सबसे बड़ा कार्य तो आप बागर प्रान्तके उद्धारमें कर रहे हैं। प्रान्तके उद्धारके लिए आप प्रतिदिन कुछ न कुछ सोचा करते हैं। किया करते हैं।

बागर प्रान्तके ग्राम ग्राममें जो सेवक मंडल तैयार हुए हैं उनमें जागृति लाना आपका ही कार्य है। आप एक जागृत कर्मठ और धनी युवक हैं। आपका उत्साह अपार है, जिस कार्य में भिड़ जाय उसे करके ही छोड़ते हैं। आप इस प्रांतके चमकते सितारे हैं। यदि ऐसे ही कुछ व्यक्ति उन्हें सहयोगी मिल जाय तो प्रान्तमें आशातीत सुधार हो सकता है।

आपका व्यक्तिगत जीवन भी बहुत ही सरल, सरल, सादा, व्यवहारपटु और मिलनसार है, गुणग्राहकता गुण भविष्यमें उन्हें बहुत ही उच्च पदपर आसीन कर सकता है।

आपकी शिक्षा हिंदीमें मिडिल तक ही हुई है, फिर भी योग्यता और प्रतिभा अपार है। इसीसे आप इस समय निम्न संस्थाओंके सभापति पदको सम्हाल रहे हैं—

श्री वागर प्रान्तीय दि. जैन सभा बांसवाडा
,, वागर प्रान्तीय दि. जैन महामंडल ,,
,, दि. जैन महावीर मंडल ,,
,, वागर प्रांतीय दि. जैन कुंथुसागर स्कालर्शिप फंड बांसवाडा.
,, कुंथुसागर जैन कन्या पाठशाला ,,
,, रायसाहब सेठ सरीया चम्पालाल विजयचंद बोर्डिंग हाऊस ,,

तथा बांसवाडा स्टेटके आप बैंकर भी हैं।

आपने अपने थोडेसे जीवन कालमें ही निम्न लिखित महान धार्मिक कार्य किये हैं—

(१) ऋषभदेव मंदिरमें ध्वजादंड आपने नया सब कार्य करके चढाया।
(२) वागर प्रान्तमें सिद्धचक्र विधान दो बक्त बडे ही ठाठब से हजारो आदमियोंको एकत्र कर किया है, सिद्धचक्र विधानकी महिमा इस प्रान्तमें सर्व प्रथम प्रकारकी।
(३) घरपर बने चैत्यालयकी वेदी प्रतिष्ठा।
(४) नरसिंहपुरा मंदिर बांसवाडाका जीर्णोद्धार व पंचकल्याणक प्रतिष्ठा.
(५) कल्याणपुर [कुंवाला] मंदिरकी पंचकल्याण प्रतिष्ठा.
(६) फाल्गुन शुक्ल २ वीर सं. २४७१में कलींजरा मंदिर की होनेवाली पंचकल्याणक प्रतिष्ठाका भार भी आप ही प्रधानतया संभालेंगे।

आपने श्री सेठ च. वि. दि. जैन बोर्डिंग बांसवाडाका ध्रुव फंड बढाकर गत वर्ष ४८०००) का कर दिया है।

उपर्युक्त कार्योंके उपलक्ष्में समाजने आपको " धर्मरत्न व समाजभूषण " के पदसे अलंकृत किया है और आपकी माताको धर्मचन्द्रिकापदसे विभूषित किया है।

आपके छोटे भाई महीपालजी सरीया भी आपके कार्योंमें सहयोग देते रहते हैं। इसीसे आपनी बडी भारी स्टेटका प्रबंध दुकानोंका संचालन उत्तम रीतिसे करते हुए भी सामाजिक और धार्मिक कार्योंमें अग्रसर रहते हैं। आप दोनों भाई राम-लक्ष्मणके समान बडे प्रेमसे रहते हैं।

आपके इस समय ३ संतान [२ पुत्रियां और १ पुत्र है] बडी सुपुत्रीका नाम ' रमणकान्ता ' व छोटीका ' गुणसुन्दरी ' व पुत्रका नाम ' हरिश्चंद्र ' है। संतानकी शिक्षाका आप पूरा ध्यान रखते हैं।

सारांश यह है कि आप एक विशेष पुरुष हैं जिनसे समाज को बडी आशायें हैं।

आपने परमपूज्य परम तपोनिधि विश्ववंद्य विद्वच्छिरोमणि, नरेंद्रवंद्य, चारित्र चूडामणि आचार्य १०८ कुंथुसागरजी महाराज के ग्रंथ " लघुबोधामृतसार " की द्वितीय आवृत्तीके प्रकाशनका जो भार लिया है वह आपकी गुरुभक्तिके अनुरूप ही है अन्य महाशयोंको आपका अनुकरण करना चाहिए।

गुणानुरागी—

जवाहरलाल जैन बांसवाडा.

चित्र-परिचय ।

—:o[~~~~~~~~]o:—

श्री रा. सा. सेठ विजयसिंहजी घांसवाला.

आप बागड प्रांतके एक चमकते हुए नक्षत्र हुए हैं। आपका सार्वजनिक व राजकीय क्षेत्रमें बहुत बडा प्रभाव था। आप दानवीरताके लिए प्रसिद्ध थे।

श्रीमती धर्मचंद्रिका जडावबाईजी—

आप स्व. सेठ विजयचंदजीकी पत्नी व सेठ मोतीचंदजी सरियाकी माता हैं। आप धर्मप्रेमी, गुरुभक्ता हैं। चातुर्मासके समय आपने आचार्यसंघकी अपूर्व सेवा की।

श्री सेठ मोतीचंदजी सरिया—

बागड प्रांतके धर्मवीर युवकरत्न व सेठ विजयचंदजीके विनयशील ज्येष्ठपुत्र हैं। धर्मकार्यमें सदा अगुवा रहते हैं। अनेक संस्थाओंके संचालक हैं। दानकार्यमें भी अपने पिताका अनुकरण करते हैं।

श्री सेठ महीपालजी सरिया—

सेठ मोतीचंदजीके लघुभ्राता, धर्मप्रेमी और गुरुभक्त हैं। अपने भाईके समान ही सदा धर्म व समाजकार्य में भाग लेते हैं, उत्साही नवयुवक हैं। मिलनसार हैं।

आपका समस्त परिवार सुखसंपत्तिसे समृद्ध हो यह हमारी भावना है।

वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
मंत्री–आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला.

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

विश्ववंद्य श्रीमदाचार्यकुन्थुसागरविरचित

लघुबोधामृतसार ।



मंगलाचरण.

ज्ञानभानुं जिनं नत्वा, श्रीदं स्वर्मोक्षदायकम् ।
लघुबोधामृतं सारं, वक्ष्ये सद्बोधहेतवे ॥ १ ॥

संस्कृतार्थः—सुज्ञानसूर्यं वीतरागपरमदेवं नत्वा सकलैश्वर्यप्रदायकमभ्युदयनिःश्रेयससाधकम् लघुबोधामृतसारं भव्यानां बोधहेतवे वक्ष्ये इति प्रतिज्ञां करोत्याचार्यः ॥ १ ॥

THE AUSPICIOUS PRAYER.

Having bowed to Jina [God], the sun of knowledge, who gives wealth and final beatitude, I (Kunthusagar) tell a short essence of nectar of advice to enable the good for its achievement. (1)

अर्थः—सुज्ञानसूर्य वीतराग परमदेव भगवंतको नमस्कार कर आचार्य ग्रंथ-निर्माणकी प्रतिज्ञा करते हैं ।

कुत्रागतोऽहं गमनीयमस्ति, कुतः सदा किं करणीयमेवं ॥
संसारवृत्तांतविदा नरेण, सदैव चित्ते खलु चिंतनीयं ॥२॥

संस्कृतार्थः—स्वपरहितमभिवाञ्छन् भवभ्रमणदुःखमनुभवन् प्रायश्चात्महितैषिणा एवं चिंतनीयम्, अहं कुत्रागतः, केन भवेनाऽत्रागतः, कुत्र च गमनीयमस्ति, क गतौ गमनीयमस्ति, अत्र च मनुष्ये भवे किं कर्तव्यमस्ति ॥ २ ॥

Where have I come, where I am to go, what is

worth to be done; a learned man should alway consider these matters regarding the world. (2

अर्थ—अपने हितको चाहनेवाले मनुष्यको प्रतिनित्य मैं कहांसे आया हूं, कहां जाना है और यहांपर मेरा कर्तव्य क्या है ? इत्यादि विषयोंका विचार अवश्य करना चाहिए।

इस संसारमें समस्त भोगोपभोग पदार्थ नाशशील हैं। इष्टवियोग अनिष्टसंयोग का संबंध इस आत्माको प्रतिसमयमें होता रहता है। जब कि षट्खंडवैभवभोगी चक्रवर्तिकी अखंड संपत्ति, अन्यदुर्लभ श्रीतीर्थंकरपरमेष्ठीकी विभूतियां, और बलभद्रादि महापुरुषोंके सर्व वैभव भी नाशशील हैं, फिर हम लोगोंकी नश्वरसंपत्तिका तो कहना ही क्या है ? क्या वह स्थिर रह सकती है ? प्रातःकालमें सुखसे स्थित मनुष्य शाम को मरणोन्मुख होता है। सबेरे पुत्रजन्मसे हसीखुशी मनानेवाले मनुष्य दुपहरको पुत्रवियोगसे दुःखसमुद्रमें गोते लगाते रहते हैं। यह जीवन जलबुद्बुदके समान है। परन्तु यह प्राणी इसके रहस्यको न समझकर मोह और अज्ञानके वशीभूत होकर यह शरीर, जीवन, पुत्रीमित्रादिबांधव और समस्त संपत्तिको स्थिर समझकर इस संसारमें परिभ्रमण करता रहता है।

यह मनुष्य पर्याय ही सब पर्यायोंमें श्रेष्ठ है। इसी भवमें आकर यह जीव अपने शुभाशुभकर्मानुसार जिस तरह नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगतियोंका टिकेट लेता है, उसी तरह संपूर्ण कर्मोंको नाश करके शिवपदको भी प्राप्त कर सकता है। परंतु ये सब इस मनुष्यके कर्तव्य और भावनापर निर्भर है।

भो गुरो ! कीदृशो जीवो नरकं याति सत्वरम् ?

Question—Oh ! preceptor ! tell me which being goes to hell ?

प्रश्न—हे गुरो ! कैसा जीव शीघ्र ही नरक पहुंचता है ?

अत्यंतकोपी कटुकप्रभाषी, धर्मस्य देवस्य गुरोर्विरोधी ।
धूर्तः शठः प्राणिवधे प्रवृत्तो, द्रोही च बंधोः कुलजातिलोपी
दानादिधर्मेषु सदा रतानां, सुश्रावकाणां ननु निंदको यः ।
दुष्टोक्तभावैरिति यश्च युक्तः, स एव पापी नरकस्य गामी

संस्कृतार्थः—तीव्रक्रोधयुक्तः, कटुवचनप्रयोक्ता, देवस्य तथा अर्हद्भाषितधर्मस्य गुरोश्च निंदकः, धूर्तः, परस्वहारे निरतशठः, प्राणिनां वधे प्रवृत्तः, हिंसकः, स्वबांधवानां द्रोही, स्वेच्छाचारेणाप-न् कुलजातिमर्यादालोपकः, दानाध्ययनदेवपूजादिसत्कार्येषु रतानां गृहस्थानां सदा दूषकः, पापी तीव्रदुष्टभावोद्भवानामेभिर्युक्तः नरकगति गच्छति ॥ ३–४ ॥

That sinful man goes to hell who at once becomes angry; who speaks bitter words; who objects to religion, God and the preceptor; who is a cunning rogue; who is inclined to kill animals; who is treacherous to his fellowmen and who wants to destroy the family and the caste; and who always reproaches the good house-holders who take interest in duties such as giving donation etc. and the one who possesses bad feelings in his mind, as are mentioned above (3-4)

अर्थ—जो अत्यंत क्रोधी है, कटुक भाषण करनेवाला है जो देव, धर्म और गुरुका विरोधी है, जो धूर्त है, मूर्ख है, प्राणियोंकी हिंसामें सदा प्रवृत्त रहता है, जो अपने भाई बंधु-ओंका द्रोही है, जो कुल और जातिका लोप करनेवाला है और

जो दान पूजा आदि धर्ममें सदा लीन रहनेवाले श्रेष्ठ श्रावकोंकी सदा निंदा करता रहता है, जिस जीवके ऊपर लिखे हुए भाव विद्यमान रहते हैं वही जीव पापी और नरकगामी समझना चाहिए।

प्रश्न—कितने वर्षोंतक जीव नरकगतिमें रहता है?

उत्तर—उत्कृष्ट ३३ सागरवर्ष पर्यंत, जघन्य दस हजार वर्ष पर्यंत और मध्यम अपनी स्थितिके अनुसार अर्थात् दस हजार वर्षोंसे लेकर अन्तर्मुहूर्तविभागक्रमसे तेतीस सागर वर्ष पर्यंत अपनी २ स्थितिके अनुसार वहांपर रहता है।

प्रश्न—कोडाकोडी किसे कहते हैं?

उत्तर—एक कोटीसे एक कोटीको गुणाकार करनेपर जो लब्ध आता है उसे कोडाकोडी कहते हैं।

प्रश्न—सागर किसे कहते हैं?

उत्तर—दस कोडाकोडी अद्धापल्यको सागर कहते हैं।

प्रश्न—अद्धपल्य किसे कहते हैं?

उत्तर—दो हजार कोश गहरे और दो हजार कोश चौडे गोल गड्ढेमें कैंचीसे जिसका दूसरा भाग न हो सके ऐसे मेंढेके बालोंको भरना। जितने बाल उसमें समावें, उनमेंसे एक एक बालको सौ सौ वर्ष बाद निकालना। जितने वर्षोंमें वे सब बाल निकल जावें, उतने वर्षोंके जितने समय हों उसको व्यवहारपल्य कहते हैं। व्यवहारपल्यसे असंख्यात गुणा उद्धारपल्य होता है। उद्धारपल्यसे असंख्यात गुणा अद्धापल्य होता है।

प्रश्न—नरकगतिमें किस तरह दुःख भोगना पडता है?

उत्तर—नरकमें रहनेवाले नारकी जीव सदा अशुभतर,

लेश्यावाले, अशुभतर परिणामवाले, अशुभतर देहके धारक अशुभतर वेदनावाले और अशुभतर विक्रिया करनेवाले होते हैं। निरन्तर अशुभकर्मका उदय रहनेके कारण उनके परिणाम आदि सदा अशुभ ही रहते हैं। नारकी जीव परस्पर कुत्तोंकी तरह निरंतर लडते झगडते रहते हैं और अंबावरीष जातिके संक्लिष्ट परिणामवाले असुरोंके द्वारा भी दुःखी किये जाते हैं अर्थात् जिस प्रकार लोकमें अनेक अज्ञानी पुरुष मेंढे, भैंस हाथियोंको मद्य पिलाकर परस्पर लडाते हैं और उनकी हार-जीतसे आनंद मानते हैं या तमाशा देखते हैं। उसी प्रकार तीसरे नरक तकके नारकी जीवोंको दुष्ट कौतुकी देव अवधि-ज्ञानसे उनके पूर्व वैरोंका स्मरण कराकर परस्पर लडाते तथा दुःखित करते रहते हैं और आप तमाशा देखते हैं और भी अनेक प्रकारके दुःख होते हैं।

तिर्यग्गतिं च को जीवो गुरो! गच्छति भो वद ?

Question Oh Preceptor! Tell me which being goes to the organic world?

प्रश्नः—हे गुरो! यह बतलाइये कि तिर्यंचगति में कौनसा जीव जाता है।

आचारहीनो हि विचारशून्यो, मिथ्याप्रलापी च बहुप्रमादी
अभक्ष्यभक्षी विपरीतवृत्ति-र्बहुभभोजी निजधर्मबाधः ॥
दंभी च लोभी विषये निमग्नो, दानादिधर्माद्धि सदैव दूरः।
पूर्वोक्तभावैरिति यश्च युक्तः स एव गंता च गतिं तिरश्चाम्

संस्कृतार्थः—यश्च सदाचारविरहितः, विवेकविहीनः, अति-प्रलापी, अतिप्रमादी, भक्ष्याभक्ष्यविवेकरहितः, बहुभोक्ता, स्वधर्ममार्ग-

दूरः, अहंकारयुक्तः, लोभी, विषयेष्वेव निमग्नः, सत्पात्रदानादि सत्कार्योपेक्षकः, मायाचारसहितः य एवं स्वभावः सोऽपि तिर्यग्गतिं याति ॥५-६॥

The person goes to the organic world. who has renounced all customary observances, who is thoughtless, who tells a lie, who makes many mistakes, who eats prohibited articles, whose nature is crooked, who eats too much and who does not follow religion, who is a pretender, who is covetous, who is plunged in sensual objects, who always keeps aloof from duties like giving donation, etc. and one who has the bad qualities described above. (5-6)

अर्थः—जो पुरुष आचाररहित है, विचाररहित है, सदा मिथ्या बकवाद करता रहता है, अत्यंत प्रमादी है, अभक्ष्य भक्षण करनेवाला है, अपनी प्रवृत्ति सदा धर्मसे विपरीत रखता है, जो अधिक अन्न भक्षण करनेवाला है निजधर्मसे पराङ्मुख है, मायाचारी है, लोभी है, विषयोंमें सदा लीन रहता है और दानपूजा आदि धर्मसे सदा दूर रहता है, जो जीव ऊपर कहे अनुसार अशुभ भावोंको धारण करता है, उसे तिर्यंच गतिमें जानेवाला समझना चाहिए।

प्रश्न—तिर्यंच गतिमें कितने समयतक रहना पडता है?

उत्तर—वहांपर उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्य, और जघन्य अन्तर्मुहूर्त तक रहती है। और अपनी २ स्थित्यनुसार मध्यम विकल्प असंख्यात हैं।

प्रश्न—वहां किस तरहके दुःख भोगने पडते हैं?

उत्तर—वहां पराधीनतासे उत्पन्न छेदन, भेदन बंधन आदि अनेक दुःख प्राप्त होते हैं। और समय २ में आहार पानादिक

का नहीं मिलना, तथा असह्य उष्ण, शीत आदि दुःख, मल-मूत्रादिके ऊपर ही सोना, उठना, बैठना, अपने दुःखोंको दूसरेसे कहनेकी असमर्थता इत्यादि दुःख तीन पल्यतक भोगने पड़ते हैं। यह मनुष्य उपरोक्त प्रकारके भावोंकी तरतमतासे कुत्ता, बिल्ली, घोड़ा, गधा, हाथी आदि नाना प्रकारसे तिर्यंच होकर जन्म लेता है। अतः मायाचारादिक दुर्वासना न करते हुए शुभभावोंसे अपना समय व्यतीत करना चाहिये।

मनुष्ययोनिं को जीवो यातीति वद मो गुरो !

Question—Oh, preceptor, tell me which being is born as man.

प्रश्नः—हे गुरो ! मनुष्ययोनिमें जाकर कौनसा जीव उत्पन्न होता है ?

यः स्वल्पलोभी विमलप्रवृत्तिः, संसारभीरुश्च दयार्द्रचित्तः।
विनीतवृत्तिः समशांतियुक्तो, धर्मप्रचारी च कुकर्मलोपी ॥
रुचिं विधत्ते गुरुदेवशास्त्रे, धर्मे सुदाने यजनेऽपि दक्षः।
पूर्वोक्तभावैरिति यश्च युक्तः, स एव धीरो नरजन्मगामी॥

संस्कृतार्थ—यश्च मानवः, स्वल्पसंतुष्टः, निर्मलाचारमार्गप्रवृत्तः संवेगपरायणः, दयालुः, विनयशीलः शान्तिसमतासाधकः, धर्मप्रभावकोऽधर्मविरोधिश्च, देवगुरुश्रुतभक्तः, सद्धर्मे सत्पात्रदाने तथा यजन-याजनादिके सत्कार्ये दक्षः, धीरश्च स्वोपात्तचरमपरिणामसंगतः मनुष्यगतिं याति ॥ ७–८ ॥

That wise being is born as man, who covets little, who is pure, who fears the worldly affairs, who is kind in his heart, who is modest by nature, who is equally peaceful at all times, who spreads the religion, who destroys bad deeds, who takes interest in the preceptor, God and the religious books, who is deligent

in religion, in giving donation and in worshipping God and one who possesses the qualities described above. (7,8)

अर्थ—जो जीव बहुत ही कम लोभ करता है, जो अपनी प्रवृत्तिको सदा निर्मल रखता है, जो संसारसे भयभीत है, जिसका हृदय सदा दयालु बना रहता है, जो सदा विनयपूर्वक रहता है, जो समता और शांतिको सदा धारण करता रहता है धर्मका प्रचार करता रहता है, कुकर्मोंको नष्ट करता रहता है, देवशास्त्रगुरुमें सदा श्रध्दान धारण करता है, जो धर्म धारण करने, दान देने और पूजा करनेमें अत्यंत चतुर हैं। इस प्रकार के शुभ भावोंसे जो सुशोभित है वह धीरवीर मनुष्यगति में जाकर जन्म लेता है।

प्रश्न—मनुष्यगतिमें कितने कालतक रहना पडता है ?

उत्तर—भोगभूमीकी अपेक्षासे उत्कृष्ट तीन पल्य वर्ष, कर्मभूमि व विदेह क्षेत्रकी अपेक्षासे एक कोटी पूर्वकाल और जघन्य अन्तर्मुहूर्तकाल तक रहना पडता है। मध्यम विकल्प असंख्यात हैं।

प्रश्न—भोगभूमि किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिस स्थानमें असि, मसि, कृषि, वाणिज्यादि षट्कर्मोंमेंसे जीवनोपाय करनेकी आवश्यकता नहीं है, केवल भाजनांग भोजनांगादि दसविध कल्पवृक्षोंसे इच्छित द्रव्य, घर, आहार, बर्तन इत्यादि सब भोगोपभोग मिलते हैं, ऐसे सुखमय स्थानोंको भोगभूमि कहते हैं।

प्रश्न—विदेहक्षेत्र किसे कहते हैं ?

उत्तर—जहां जीव असंख्यात वर्षकालके आयुको पाकर,

श्री तीर्थकरोंके चरणकमलोंकी साक्षात् सेवा कर, मोक्ष जाने की योग्यता प्राप्त होती है उसे विदेहक्षेत्र कहते हैं। यह विदेह क्षेत्र इस जम्बूद्वीपके बीचमें है। वहांपर अनवरत [illegible] होता रहता है। और पुण्यजीव ही वहां उत्पन्न होते हैं। इस पंचमकालमें भरतक्षेत्रसे मुक्ति न होनेपर भी इस मनुष्य [illegible] विशिष्ट पुण्यसंचय करके विदेहक्षेत्रमें जन्म पाकर वहां [illegible] मोक्ष जा सकते हैं। अतः भव्य प्राणियोंको शुभ भावनाओंसे विदेहक्षेत्रमें जन्म लेनेका प्रयत्न करना चाहिए।

स्वर्गेऽति कीदृशो जीवो याति भो सद्गुरो वद!

Question:—Oh, good priest! what kind of being goes to heaven?

प्रश्न:—हे गुरो! अब यह बतलाइये कि स्वर्गगतिमें कैसा जीव जाता है?

भोगाच्छरीराच्च भयाद्विरक्तो, देशव्रती वा [illegible] वा
सम्यक्त्वयुक्तश्च रमार्गहीनः, स्वाध्यायसं[illegible] [illegible]।
निजात्मशुद्धिं स्वपरोपकारं, कर्तुं सदा सं[illegible] [illegible]।
पूर्वोक्तभावैरिति यश्च युक्तः, स एव भव्यो [illegible] [illegible]।

संस्कृतार्थ—[illegible] संसारभोगशरीरनिर्विण्णः [illegible] देशव्रतं सकलव्रतं वा गृहीतः, सद्दृष्टिसहितः, [illegible] [illegible], स्वाध्यायजपतपादिकार्ये लीनः, निजात्मविशुद्धं [illegible] च कर्तुं सदा उद्युक्तः, सः स्वोपार्जितशुभभावैः [illegible] ॥१०-२०॥

Only that fortunate being in this world goes to heaven, who is free from enjoyment of body, who observes the five vows in some degree (अणुव्रत) or completely (महाव्रत), who believes [illegible] against religious principles; who [illegible]

religious books, who does pennance, who always tries to keep his soul pure and tries to do good to others, and one who possesses the feelings mentioned above. (9-10)

अर्थ—जो मनुष्य संसार शरीर और भोगोंसे विरक्त है, जो देशव्रती है वा सकलव्रती है, जो सम्यग्दर्शनसे सुशोभित है, परंतु जो चरमशरीरी नहीं है, जो स्वाध्यायमें लीन रहता है, तपश्चरणसे सुशोभित है और जो अपने आत्माकी शुद्धि, अपने आत्माका कल्याण तथा अन्य जीवोंका कल्याण करनेके लिए प्रयत्न पूर्वक सदा उद्योग करता रहता है, इस प्रकार जो ऊपर लिखे शुभ भावोंसे सदा सुशोभित रहता है वही भव्य स्वर्ग जानेवाला समझना चाहिए।

प्रश्नः—स्वर्गमें रहनेवाले जीवोंकी कितनी स्थिति है ?

उत्तरः—उत्कृष्टायु तेतीस सागर वर्ष, जघन्यायु दसहजार वर्ष और मध्यम विकल्प अनेक प्रकार है।

(सागरका प्रमाण नरकगतिके वर्णनमें कहा गया है)

प्रश्नः—स्वर्गमें कैसे सुख मिलते हैं ?

उत्तरः—स्वर्गमें अनेक देवांगना, अप्सरादि देवियोंसे उत्पन्न सुख देवगण भोगते हैं, वहां कृष्यादि आरंभक्रिया नहीं है। जब वहां उत्पन्न होते हैं सभी सोलहवर्षके युवकके समान उपपाद शय्यासे उठ बैठते हैं। उसी समय देवांगनायें रत्नवस्त्राभरणोंको लेकर दास दासी वगैरे आकर सामने खडे होते हैं। दश विध कल्पवृक्षोंसे जो चाहे वस्तु मिलते हैं। जो सम्यग्दृष्टि देव हैं वे अपने विमानमें बैठकर अनेक तीर्थस्थान नंदीश्वर आदि

द्वीपोंमें और जहां २ अकृत्रिम चैत्यालय है, वहां पहुंचकर वंदना करते हैं। विशेष पुण्यसे देवेंद्रपद मिलता है। सातिशय पुण्यसे यह जीव दूसरे भवसे मोक्षको प्राप्त करने योग्य लौकांतिक देव या अहमिंद्र पदको प्राप्त करता है। अपनी आयुमें छह महिने अवशेष रहनेपर उन देवोंकी पुष्पमाला आभरणादिकोंकी कांति कम हो जाती हैं, तब उनको अपरिमित दुःख होता है। लेकिन सम्यग्दृष्टियोंको यह दुःख नहीं होता है। सम्यग्दर्शनके फलसे स्वर्ग मिलता है। शुभकार्योंके फलसे भवनवासी आदि देव होते हैं। अतः सम्यग्दर्शन प्राप्त करके अतिशय पुण्य पाकर मोक्ष प्राप्तिके लिए प्रयत्न करना चाहिये।

कीदृशः पुरुषो लोके मोक्षं गच्छति भो गुरो !

Question:—What kind of man obtains the final beatitude ?

प्रश्न—हे गुरो ! इस संसारमें कैसा मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है?

महाव्रतं वा समितिं दधानो, निजात्मनिष्ठश्चरमांगधारी।
कर्तुं स्वराज्यं यतते सदैव, स्वात्मानुभूत्यां स्वपदेऽस्ति लीनः
ध्यानेन शुक्लेन च कर्महंता द्रष्टा प्रबोद्धा च निजात्मनो यः।
पूर्वोक्तभावैरिति यश्च युक्तः स एव योगी भुवि मोक्षभागी॥

संस्कृतार्थ—यश्च मानवः पंचमहाव्रतं धारयन् पंचसमिति पालयति, स्वात्मानंदमग्नः, चरमशरीरधारकः, स्वात्मपदं प्राप्तुं यतते, स्वानुभूतिं चानुभवति, शुक्लध्यानानलेन कर्मेधनं दहति, आत्मनो द्रष्टा प्रबोद्धा च सः स्वात्मजन्यविशुद्धभावबलेन मोक्षमाश्रयति तथा च अनंतकालपर्यंतं परमानंदपरिपूर्णं स्वराज्यमधिगच्छति ॥ ११-१२ ॥

Only that fortunate being on this world is fit

to get the final beatitude, who observes the five vows completely, or who follows the five rules of behaviour (समिति). who is obsorbed in his soul, who follows the religious principles, who always tries to get independence, who is inclined in his own experience and his own position (Station), who destroys the evil deed by his pure meditation, who sees and advises his own soul, and one who possesses the things mentioned above. (11-12)

अर्थः—जो मुनि महाव्रत व समितिको धारण करते हैं, जो अपने आत्मामें सदा निमग्न रहते हैं, चरमशरीरी हैं, जो मोक्षरूप स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए सदा प्रयत्न करते रहते हैं स्वात्मानुभूति और स्वात्मपदमें सदा लीन रहते हैं। जो शुक्ल ध्यानके द्वारा कर्मोंको नाश करनेवाले हैं और अपने शुद्ध आत्माके ज्ञाता द्रष्टा है, इस प्रकार जो मुनि शुद्धभावोंसे सुशोभित हैं वे ही मुनि इस संसारमें मोक्ष जाते हैं।

प्रश्न—मुनियोंके आवश्यकीय मूलगुण कितने हैं?

साधुके लिए निम्न लिखित अट्ठाईस मूलगुणोंका पालन करना अनिवार्य है।

[१] अहिंसा महाव्रत—पूर्ण अहिंसा धर्मका पालन करना [२] सत्यमहाव्रत—पूर्ण सत्यधर्मका पालन करना, [३] अस्तेय महाव्रत–पूर्ण अस्तेयधर्मका पालन करना, [४] ब्रह्मचर्यमहाव्रत–पूर्ण ब्रह्मचर्यधर्मका पालन करना, [५] अपरिग्रहमहाव्रत—पूर्ण अपरिग्रहधर्मका निर्वाह करना, [६] ईर्यासमिति—प्रयोजन जंतुरहित मार्गसे चार हाथ जमीन देखकर चलना, [७]

भाषासमिति—निर्दोष वचन बोलना, [८] एषणासमिति—शुद्धभोजन जो गृहस्थने अपने लिए तयार किया हो, उसे भिक्षा रूपसे भक्ति एवं निःस्वार्थ भावसे दिये जानेपर ही लेना [९] आदाननिक्षेपणा समिति—अपना शरीर और अन्य वस्तु जो कुछ भी हो उसे देख-भालकर उठाना एवं रखना, [१०] प्रतिष्ठापना समिति—मलमूत्रादिका त्याग जीवरहित स्थानमें करना [११] चक्षुनिरोधव्रत—सुंदर और असुंदर दर्शनीय वस्तुओंमें रागद्वेष तथा आसक्तिका त्याग करना, [१२] कर्णेंद्रियनिरोधव्रत—सुंदर और असुंदर स्वरमें विरक्ति एवं आसक्तिका परिहार [१३] घ्राणेंद्रियनिरोधव्रत—सुगंध तथा दुर्गंधमें राग-द्वेषको त्याग करना, [१४] रसनेंद्रियनिरोधव्रत—जिह्वाकी लोलुपताका त्याग करना [१५] स्पर्शनेंद्रियनिरोधव्रत—मृदु रूक्ष आदि आठ प्रकार के दुःख अथवा सुखरूप स्पर्शमें हर्ष विषादसे वंचित रहना [१६] सामायिक—जीवन-मरण, संयोग-वियोग, सुख-दुःख आदि में राग-द्वेष रहित समभाव रखना [१७] स्तवन [१८] वंदना, [१९] प्रतिक्रमण—किये गये दोषोंको शोधना [२०] प्रत्याख्यान—आगामी कालके लिए अयोग्यवस्तुका त्याग करना, [२१] कायोत्सर्ग, [२२] केशलोच—तीन चार महीने बाद उपवास पूर्वक अपने हाथसे मस्तक एवं मूछके बालोंको उखाड़ना [२३] नग्नता—वस्त्र, चर्म, तृण आदिसे शरीरको न ढकना अर्थात् दिगम्बर वेषमें जीवन बिताना [२४] अस्नान—स्नान, उबटन अंजन लेपन आदिका त्याग करना [२५] क्षितिशयन—बाधारहित शुद्ध प्रदेशमें दण्ड अथवा धनुषके समान थोड़े समयकेलिए सोना [२६]

मंजन आदिसे दंतधावन नहीं करना [२७] स्थितिभोजन–अपने हाथोंको पात्र बनाकर दीवाल आदिका सहारा न लेकर चार अंगुलके अंतरसे सम–पाद खड़े होकर शुद्धतासे आहारग्रहण करना [२८] एकभुक्त—सूर्यके उदय और अस्तकालकी तीन घड़ी छोड़कर एकवार भोजन करना।

इस प्रकार अट्ठाईस मूलगुणोंको धारणकर बाईस परीषहों को भी शांत हृदयसे जीतना चाहिए।

प्रश्नः—मोक्ष किसे कहते हैं ?

उत्तरः—यह आत्मा जब ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंको नाश कर, इस संसारबंधनसे पार होकर, अनंतज्ञान, अनंतदर्शनादि आठ जो गुणोंको प्राप्त करता है उसे मोक्ष कहते हैं। श्रीउमास्वामी आचार्यश्रीने ऐसा कहा है कि 'कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः' यह मोक्ष लोकके अग्रभागमें है। उस स्थानको प्राप्त करनेपर यह जीवात्मा परमात्मा हो जाता है। वह फिर जन्ममरणरूप संसारमें आकर दुःख नहीं भोगता है। उस स्थानको प्राप्त कर नेके बाद राग, द्वेष, मद, मात्सर्यादि विकार उस आत्मामें उत्पन्न नहीं होते हैं। जिस प्रकार एक बीजको जलानेपर फिर उसमें अंकुरोत्पत्तिकी योग्यता नहीं रहती है, तद्वत् उस आत्मा में रागद्वेषादि विकारभाव उत्पन्न नहीं हो सकते हैं, अन्य संप्रदायवाले मोक्ष पदार्थको स्वीकार तो करते हैं, परन्तु फिर वहांसे कभी न कभी इस संसारमें जीवको आना पड़ता है ऐसा कहते हैं। यदि यह बात है तो उसे वह यथार्थ सुख नहीं है। क्यों कि उसके बाद दुःख समुद्रमें फिर पड़ना पड़ता है। परन्तु

अनेकांतवादी (जैन) मोक्षके स्वरूपको ऐसा नहीं मानते हैं। जैनमतके अनुसार परमात्मा अनंतानंतकालतक परमानंदपदके पद होकर सुख भोगता है।

ऐसे परम पवित्र स्थानको प्राप्त करना प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है और उसके लिए अवश्य ही प्रयत्न करना चाहिए। यही आत्मकल्याणकी व जीवात्माकी उन्नतिकी पराकाष्ठा और अंतिम ध्येय है।

आत्मकल्याण चाहनेवाले भव्य जीव सद्गुरुओंके पाद-मूलमें जाकर सद्धर्मोंको श्रवण करें एवं आत्मकल्याणके साधक मार्गका अवलंबन करें। यह आत्मा अनादिकालसे कर्मबद्ध होकर क्रोधादि विकारोंमें सुखानुभव करता हुआ आ रहा है। आत्माको उन कर्मोंसे मुक्त होनेके लिए एक निश्चय है। उसे ही कालब्धि कहते हैं। केवल काल धीरज लेने-मेंसे मोक्ष नहीं मिलता है। उसके लिए देवपूजा, गुरूपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप, स्तोत्र आदि शुभकार्योंमें उपयोगको व्यतीत करना चाहिए। अनेक भवोंमें इंद्रियोंका दमन, कायक्लेश करके अनशनादि तपोंका [illegible] करना चाहिये। ये सब आत्मामें विद्यमान कषायोंके [illegible] करनेके लिए और शुभपरिणामोंके वर्धनके [illegible] कारण हैं। शुभपरिणामोंकी वृद्धिसे आत्माके अशुभकर्मोंका नाश होकर उसमें निर्मलज्ञानका विकास होता है। [illegible] विकाससे आत्माको संसारकी परिस्थितिका परिज्ञान [illegible]। [illegible] यह आत्मा तत्त्वविचार करके आत्मा और [illegible] ने लगता है और उसे देहादि पदार्थ [illegible] और

ज्ञानादिगुण शाश्वत और उपादेय इस प्रकारका ज्ञान होता है परव्यामोहसे खोये हुए निज गुणोंको प्राप्त करनेके लिए गुरुओंके उपदेशानुसार प्रयत्न करता है। आगममें वर्णित मार्गसे कर्मपरतंत्रताको दूर करके आत्माके निजगुणोंको प्राप्त करता है। इसी अवस्थाको मोक्ष या स्वराज्य कहते हैं। ऐसे स्वराज्यको प्राप्त करनेके लिए हर एक भव्यप्राणी अनवरत अवश्य प्रयत्न करें।

स्वराज्य प्राप्तिके सरल मार्गको " बृहत् बोधामृतसार " में विस्तारसे वर्णन किया है, वहांसे जान लेना चाहिए। यहांपर संक्षेपसे दिग्दर्शन मात्र किया है।

इस प्रकार परमपूज्य, प्रातःस्मरणीय, विश्ववंद्य, नरेंद्रपूज्य, चारित्रचूडामणि आचार्य श्रीकुंथुसागर महाराज–
विरचित लघुबोधामृतसार समाप्त हुआ।

समाप्तः।



श्री १०८ आचार्य कुंथुसागर महाराजकी

★ पूजा. ★

[रचयिता—वैद्यरत्न पं. आनंदरामजी शर्मा]

स्थापना—(अडिल्ल छन्द)

धन्य घड़ी धन्य भाल धन्य मम भाग्यको,
देख कुन्थु छबि परम सौम्य गुरुदेवको ।
हित-उपदेशी मिष्ट श्रेष्ठ भाषण करें,
भविगण सुनत हृदयमें आनन्द अति भरें ॥१॥
भवदधि तारण तरण तरणि बलानिधे,
दुर्धरपुण्यमें आय कर्मरिपु मानिये ।
आह्वानन संस्थापन सन्निधिकरणमें,
रत्नत्रय वरदान देउ भवि शरणमें ॥२॥

ॐ ह्रीं आचार्यवर श्रीकुन्थुसागर स्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् । इत्याह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

क्षीरोदधि सम मनहार, शीतल सुखकारी,
श्री गुरु ढिंग नीर चढ़ाय, जनम जरा टारी ।
श्री कुन्थुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
[illegible] आज, मिल सब नरनारी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यवरश्रीकुंथुसागरस्वामिने जन्मजरामृत्यु-विनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

केशर कर्पूर मिलाय, चंदन संग घसें,
भवि मिल सब आन चढाय, भव आताप नसे ॥
श्रीकुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनंदसे पूजें आज, मिल सब नरनारी ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवर श्रीकुन्थुसागरस्वामिने संसारताप-विनाशाय दिव्यचंदनं ।

शुभ तंदुल चंद्र समान, अक्षय सुखकारे,
चरणोंमें पुञ्ज चढाय, सब ही दुख टारे ।
श्री कुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनंदसे पूजें आज, मिल सब नरनारी ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुन्थुसागरस्वामिने अक्षयपदप्राप्तये दिव्याक्षतं ।

चम्पा अरु जुही गुलाब, गेंदा मरुवाके,
ये काम-बाण नश जाय, भेंट करूं लयाके ।
श्री कुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनन्दसे पूजें आज मिल सब नरनारी ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुन्थुसागरस्वामिने कामबाणविनाशाय दिव्य पुष्पं ।

ले घेवर बावर आदि, फेनी थाल भरें,
यह क्षुधा वेदनी नाश, गुरुसे विनय करें ।
श्रीकुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनंदसे पूजें आज, मिल सब नरनारी ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुंथुसागरस्वामिने क्षुधारोगविनाशाय दिव्यनैवेद्यं।

मणिमय दीपककी राशि, सबही तिमिर कटे।
हो जगमग ज्योति अपार, ज्ञानकला प्रकटे।
श्री कुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनंदसे पूजें आज, मिल सब नरनारी ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुंथुसागरस्वामिने मोहान्धकार-विनाशाय दिव्यदीपं।

ले मनहर धूप अनूप, हुताशन खेप करें,
वसु कर्म काष्ठ जर जांय, सब मिल अर्ज करें।
श्री कुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनंदसे पूजें आज, मिल सब नरनारी ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुंथुसागरस्वामिने अष्टकर्मदहनाय दिव्यधूपं।

श्रीफल अरु दाख बदाम, पिस्ता सुखकारे,
शिवतियके पावन हेतु, लावें अति प्यारे।
श्री कुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनंदसे पूजें आज मिल सब नरनारी ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यवरश्रीकुंथुसागरस्वामिने मोक्षफलप्राप्तये दिव्यफलं।

जल चंदन अक्षत पुष्प, नेवज अति ताजे,
ले दीप धूप फल, अर्घ 'आनंद' अप भाजे।
श्रीकुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,
आनंदसे पूजें आज, मिल सब नरनारी ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुंथुसागरस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये दिव्यार्घ्यम्।

अथ जयमाला

— दोहा —

कुंथुसिंधु गुरुवर महा, जग जनके प्रतिपाळ ।
हर्षित हो आनंद युत, गावें गुण गण माळ ॥

पद्धरी छन्द.

जय कुन्थुसिंधु गुरुवर सुजान,
आतम हित तप करते महान ।
जय तेरह विध चारित्र पाळ,
भवसिंधु तार गुरुवर दयाळ ॥१॥
जय उत्तम शुभ दश धर्म पाल,
भवि जन लखि छवि होते निहाळ ।
जय जय जिनमत दीक्षा सुधार,
निर्भय निशंक करते विहार ॥२॥
जय ध्यान सुथिर मुद्रा सुदेख,
भविगण सब मेटत कर्म रेख ।
जय राग द्वेष चितमें न ठान,
धर्मामृत वर्षायो महान ॥३॥
जय बोधामृत वर ग्रंथ जान,
की ज्ञानामृत रचना सुखान ।
चतुर्विंशति आदि अनेक ग्रंथ,
संस्कृतमें जो कल्याण पंथ ॥४॥
जय धन्य धन्य श्री कुन्थु पाल,
मनमोहक रचना की विशाळ ।

जय धर्म मर्म में बहु प्रवीण,
लखि ज्ञान समा आश्चर्य कीन ॥५॥
जय क्रोध मान माया विहीन,
अरु मोह रोगको करत छीन।
भवसागरमें हैं दुःख अपार,
तिनको तुम मेटो जगतपाल ॥ ६ ॥
जय ऐनापुरमें जन्म ठान,
सातव्वा श्रीके रत्न खान।
जय धन्य सरस्वती देवि माय,
श्रीशांतिशिरोमणि सुगुरु पाय ॥ ७ ॥
जय शिवसुंदरि को करत ध्यान,
सब ही को देवे ज्ञान दान।
जय भारतवर्ष विहार कीन,
श्रावक बोधे किरिया विहीन ॥ ८ ॥
जय परम धुरंधर धर्म खान,
चमकायो जिन वृष किरण भान।
उपदेशामृत से सींच सींच,
संबोधे भवि जन खींच खींच ॥ ९ ॥
जय जय जग विभु करुणा निधान,
गुरु सुखद मूर्ति गुण पुञ्ज खान।
उपकार किये जगके विशेष,
बहु गुण गायें गुणिजन हमेश ॥ १० ॥
जय धर्म दिवाकर रत्न खान,
भो गुरु मिथ्यातप हरन भान।

जय मन्मथ-हारी परम धीर,
वर्षाया जगमें धर्म नीर ॥ ११ ॥
जय साधु सुपदका मन्त्र जाप,
मंगल उत्तम हैं शरण आप।
संसार कष्टको करत नाश,
सब पूरे मन वांछित शु आश ॥ १२ ॥
जय विश्व उधारन दुख निवार,
सब वचन कर्म को करन क्षार।
जय जय जयवंतो गुरुदयाल,
श्री कुंथु सिंधु गुरुवर विशाल ॥ १३ ॥
जय बलिहारी गुणगण कृपाल,
सब राव रंक आ नमत भाल।
जय चरणवंदना करत आन,
राजा महाराजा भक्ति गान ॥१४॥
तव गुणमहिमा अद्भुत अपार,
हम अल्पबुद्धि किम लहें पार।
आनंददास चिर नमत भाल,
मेटो गुरुवर ये दुखद जाल ॥ १५ ॥
संसार विषय यें खार खार,
तुक चरण विनय कीजे उबार।
पूजें वंदे मन वचन काय,
जल गंधादिक वसु द्रव्य लयाय ॥१६॥
जय आदि सिंधु मुनिराय चीन।
श्रीगुरु सेवा भक्ति करन लीन—

जय अजित सिंधुगुणधर महान ।
श्रीदेवसिंधुमुनि गुणगण निधान ॥ १७ ॥

ऐलुकवर बाहुबली महान,
ब्रह्मचारी जिनदास सुजान ।
सब संघसहित करते विहार,
भवि जीवनके जीवन सुधार ॥ १८ ॥

घत्ता.

जय गुणगण मद्रा धर्म समुद्रा, आतम मुद्रा सुखकारी ।
श्रीकुंथु तपोधन, कर्म हनो मम पूजत भवि जन हितकारी १९

॥ इति पूर्णार्घ्यम् ॥

घत्ता.

जे पूज रचावें गुणगण गावें, आतम ध्यावें नर नारी ।
ते पुण्य बढावें शिवपुर जावें, आनंद पावें अविकारी ॥२०॥

॥ इत्याशीर्वाद ॥

घोर तपस्वी श्रेष्ठ मुनि, आदिसिंधु मुनिराज,
अर्घ्य लेय पूजा करूं, पार करो गुरुराज ।
ॐ ह्रीं श्री मुनि आदिसागरस्वामिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
अजितसिंधु मुनिरायको, पूजों अर्घ्य चढाय,
पुण्यवृद्धि हो जगतमें पाप सर्व नासि जाय ।
ॐ ह्रीं मुनि श्रीअजितसागराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
देवसिंधु मुनिराजको चरणनि अर्घ्य चढाय ॥
मैं पूजूं शुभभावते दुष्ट कर्म नासि जाय ॥
ॐ ह्रीं देवसागराय अर्घ्यं नि

आरती.

जय कुंथुस्वामी गुरु जय कुंथुस्वामी।
आरती करूं तुम चरणे, आरती करूं तुम चरणे।
निशदिन शिश नामी, जय देव जय देव ॥१॥
ऐनापुर नगरी मध्यें, सातप्पा पिता, गुरु सातप्पा पिता।
माता सरस्वति कूखे [२] जनम्या गुरुदाता।
जयदेव जयदेव, जय कुन्थु स्वामी। जयदेव० ॥२॥
शांति-सागर श्री गुरुचरणे शिश नामी गुरु चरणे
शिश नामी॥
आप थयो वैरागी [२] सद्गुणना धारी॥
जयदेव जयदेव, जय कुंथुस्वामी॥ जयदेव ॥३॥
दीक्षा लीधी गुरुदेवा—आभव जलतरवा—गुरु आभव
जलतरवा॥
ज्ञानामृत बरसावो [२] शिवरमणी वरवा। जयदेव
जयदेव, जय कुंथुस्वामी। जयदेव ॥४॥
बोधामृत ज्ञानामृत—ग्रंथ नवीन सारा (गुरु)
रचिया पूरण प्रीते [२] सुद्गुणना धारी। जयदेव.
जयदेव जय कुन्थुस्वामी—जयदेव ॥५॥
व्याख्यानो विधविध, आप सदा करता (गुरु)
सौ समाज दुख हरता (२) वाणी उचरता। जय. जय.
जय कुन्थुस्वामी—जयदेव ॥६॥
श्रीगुरुनी सेवा—जे भावे करता [गुरु]
कहे चुनीलाल सेवक (२) भवसंकट हरता। जयदेव.
जयदेव जय कुंथुस्वामी—जयदेव ॥ ७ ॥

—०—

निवेदन.

जो श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमालाके
उत्तमोत्तम सर्व ग्रंथोंका स्वाध्याय
करना चाहते हैं वे १०१) देकर
ग्रंथमालाके स्थायी सदस्य बनें।
स्थायीसदस्योंको ग्रंथमालासे
प्रकाशित व प्रकाश्य सर्व ग्रंथ
बिनामूल्य दिये जाते हैं।

निवेदक—
मंत्री–आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला
सोलापुर.